International Journal of Applied Research 2023; 9(4): 188-193

ISSN Print: 2394-7500
ISSN Online: 2394-5869
Impact Factor: 8.4
IJAR 2023; 9(4): 188-193
www.allresearchjournal.com
Received: 23-01-2023
Accepted: 26-02-2023

अपराजिता मिश्रा
शोध छात्रा, इतिहास विभाग, शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, रीवा, मध्य प्रदेश, भारत

डॉ. महेन्द्र मणि द्विवेदी
प्राध्यापक, इतिहास विभाग, शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, रीवा, मध्य प्रदेश, भारत

Corresponding Author:
अपराजिता मिश्रा
शोध छात्रा, इतिहास विभाग, शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, रीवा, मध्य प्रदेश, भारत

प्राचीन इतिहास की साक्षी नर्मदा

अपराजिता मिश्रा, डॉ. महेन्द्र मणि द्विवेदी

सारांश
प्राचीन भारतीय धर्म ग्रंथ पुराण नर्मदा को कई कल्पों की साक्षी[1] बताते हैं, कल्पांत स्थाईनी बताते हैं। इस मत के अनुसार नर्मदा सृष्टि के नवनिर्माण के पूर्व से इस देश मे है। प्रलय के दौरान समुद्र में विचरण करती है और नई सृश्टि की रचना के बाद पुनः भूलोक में अवतरित होती है। इस तरह मानव जीवन के साथ ही नर्मदा का अवतरण होता है। अब सवाल उठता है कि सृष्टि का सृजन कब हुआ? मानव का जन्म कब हुआ? इतिहासकार, पुरातत्ववेत्ता और भू वैज्ञानिक इस बात को लेकर लगातार अनुसंधानरत हैं कि पृथ्वी की और पृथ्वी पर मानव जीवन की उत्पत्ति कब और कैसे हुई। इस संबंध में विश्व भर के अलग–अलग इतिहासकारों एवं वैज्ञानिकों ने अपने अलग–अलग मत दिए, लेकिन उनमे एकरूपता नहीं बन सकी। वर्ष 1952 में ग्वालियर में हुए इतिहास कांग्रेस के अधिवेशन में सभापति के रूप से अपने उद्बोधन के दौरान डॉ राधाकुमुद बनर्जी ने कहा आदि मनुष्य पंजाब और शिवाली की ऊंची भूमि पर विकसित हुआ होगा, इस बात के प्रमाण मिलते हैं। डाक्टर मुखर्जी के अनुसार मानव की उत्पत्ति भारत में हुई और इसी देश में उसकी सभ्यता विकसित हुई।[2]
परवर्ती इतिहासकारों का मानना है कि अगर मनुष्य भारत में जन्मा तो वह उत्तर नहीं दक्षिण में जन्मा होगा। भारत की सबसे पुरानी धरती वह है जो विंध्य पर्वत से होती हुई दक्षिण की ओर गई है। अर्थात् नर्मदा के तट से दक्षिण का भू–भाग। ''भागवत पुराण सृष्टि के आरंभ के बारे में बताता है कि दक्षिण में द्रविण देश के स्वामी राजर्षि सत्यव्रत इस काल के वैवस्वत मनु हुए। पूर्व कल्प के अंत में हुए महाप्रलय से बचने वाले मनु और उनके परिवार से ही मनुष्य जाति उत्पन्न हुई। मनु के दस पुत्र थे, जिनमें बड़ा पुत्र अर्धनारीश्वर था, इसलिए उसके दो नाम थे इल और इला। इल से सूर्यवंश और इला से चंद्रवंश का जन्म हुआ।''[3]
भूगर्भवेत्ताओं द्वारा किए गए अनुसंधान के दौरान वर्ष 1935 ईस्वी में बड़ौदा राज्य में नर्मदा के समीप लघु मानव का एक तीस इंच लंबा कंकाल मिला, जिसे वैज्ञानिक आदिमानव का कंकाल समझते हैं। इसके बाद 1982 में नर्मदा घाटी के सीहोर जिले में हथनोरा नामक स्थल से होमोइरेक्टस मानव की संपूर्ण खोपड़ी मिली, जिसे परीक्षण के उपरांत आद्य होमोसेपियंस[4] एवं चार लाख वर्ष प्राचीन माना गया। इसी तरह होशंगाबाद के समीप मिलेहोमोनिड मानवो के प्रमाण, नर्मदा के समीप प्राचीन गुफाओं में उपलब्ध शैलचित्र, डायनासोर के अंडों के जीवाष्म, कुल्हाड़ी एवं धार जिले में मिली पुरातन गहने बनाने वाली फैक्ट्री जैसी तमाम चीजें नर्मदा घाटी से लगातार प्राप्त हो रही हैं। इस प्रकार से पुरातात्विक अन्वेषणों से यह धारणा मजबूत होती है कि मानव का जन्म और विकास नर्मदा के तट पर या नर्मदा के समीप हुआ।

कूटशब्द : प्राचीन इतिहास, नर्मदा, विंध्याचल

प्रस्तावना
जन विज्ञान की कसौटी पर देखा जाए तो भारतवर्ष में प्रमुखतया चार तरह के लोग मिलते हैं। एक वे जिनका कद छोटा, रंगकाला, नाक चौड़ी और बाल घुंघराले होते हैं। ये लोग सामान्यतया जंगलों में बसते हैं और ये उन आदिवासियों की संताने हैं जो आर्य एवं द्रविण से पूर्व यहां के रहवासी रहे हैं। दूसरे वे हैं, जिनका कद छोटा होता है, इनका रंग काला, मस्तक लंबा, सिर के बाल घने, नाक खड़ी और चौड़ी होती है। रंग वा कद में आदिवासियों से थोड़ी समानता जरूर रखते हैं, पर ये आदिवासियों से पूर्णतया भिन्न है। विंध्याचल के नीचे दक्षिण भाग में इन की प्रधानता है, ये द्रविड़ कहलाते हैं। इन्ही के पूर्वज आर्यों से पूर्व इस क्षेत्र में आए और पहले पहल भारत में नगर सभ्यता की नींव रखने वाले हैं। तीसरे आर्य जाति के लोग हैं, जिनका वर्णन प्राचीन भारतीय साहित्य मिलता है। आर्यों का कद लंबा और रंग गेहुंआ होता है और इनकी नाक नुकीली व लम्बी होती हैं। आर्यों और द्रविणों में संघर्ष समाप्त होने के बाद में द्रविण और आदिवासियों से इनके वैवाहिक संबंधों एवं ऊष्ण जलवायु के प्रभाव के कारण इनके रंग और कद में कुछ परिवर्तन हो गया। चौथे वे हैं जो वर्मा, असम, नेपाल, भूटान एवं बंगाल और कश्मीर के उत्तरी किनारों पर मिलते हैं। यह मंगोल जाति के लोग हैं। जो आगे चलकर किरात कहलाने लगे। अत्यंत प्राचीनकाल में इन्हीं वनवासी आदिवासी, द्रविण जाति और आर्य जाति के लोगों से मिलकर भारतीय समाज की रचना हुई।[5]

औष्ट्रिक (आग्नेय), मंगोल और नीग्रो की निवास स्थली

वनांचल में रहने वाले आदिवासियों के बीच मंगोल, नीग्रो एवं औष्ट्रिक नामक जातियों के लोग भी शामिल हैं जो द्रविण से पूर्व यहां आए। नीग्रो और औष्ट्रिक जातियों के मिश्रण से बने लोग सबर और मंगोल जाति वाले किरात कहलाते हैं। विभिन्न साहित्यों में मेकल से लेकर नर्मदा घाटी के पर्वतीय अंचलों में वनवासियों के साथ शबर और किरात लोगों के निवास करने की बातें कही गई हैं। बाणभट्ट के महागद्यकाव्य ग्रंथ कादंबरी एवं हर्ष चरितम में विंध्यावटी में निवासरत वनवासियों एवं शबर जाति के लोगों का वर्णन किया गया है। बाणभट्ट लिखते हैं कि ष्हर्ष जब विंध्याचल में प्रवेश करते हैं तो जंगली प्रदेश के लोगों के राजा शबरकेतु का लड़का व्याघ्रकेतु एक शबर युवक के साथ उनसे मिलने आता है।[6] इसी तरह जब दिवाकर मित्र नामक बौद्ध भिक्षु हर्ष से मिलने आते हैं तो राजा हर्ष उनसे कहते हैं कि ष्मेरी बहन विंध्य वन में आ गई है, जहां जंगली हाथियों और सिंहों के साथ ही दुराचारी शबर निवास करते हैं।[7] इसी तरह बाणभट्ट कादम्बरी में लिखते हैं कि श्राजा के पूछने पर वैशम्पायन अपनी कथा बताते हुए कहता है कि विंध्याटवी के जंगल मे में अपने पिता और माता के साथ रहता था। एक दिन मुझे शिकारियों की बड़ी भीड़ का कोलाहल सुनाई दिया। मैने वन के भीतर से अपनी ओर आने वाली भीलों की सेना देखी जिसमे अनेकों हजार भील थे। वे कद में छोटे थे, मगर अत्यंत शक्तिशाली होने के कारण अयालरहित सिंहेलो से प्रतीत हो रहे थे।[8] श्औष्ट्रिक (अग्नि) वंश के लोग मेडागास्कर और विंध्य मेकला से प्रशांत महासागर के ईस्टर द्वीप तक फैले हुए हैं। कोल और मुंडा जाति के लोग इसी औश्ट्रिक वंश की मिश्रित संतान है। नर्मदांचल में निवासरत शबर, किरात, भील जातियां इस क्षेत्र की प्राचीनता को परिलक्षित करती हैं।

द्रविण जाति का उद्भव

द्रविड़ जाति प्राचीन विश्व की अत्यंत सुसभ्य जाति थी। भारत में सभ्यता का वास्तविक आरंभ इसी जाति ने किया था। जब द्रविण इस क्षेत्र में आए तो यहां आग्नेय (औश्ट्रिक) जाति वालों की प्रधानता थी और कुछ नीग्रो जाति के लोग भी वर्तमान थे। अनुमान किया जाता है कि नीग्रो और आग्नेय जाति के लोगों की बहुत सी बातें पहले द्रविण सभ्यता में आईं और फिर आर्य द्रविड़ मिलन होने पर आर्य सभ्यता में प्रवेश कर गईं। द्रविण शांतिप्रिय स्वभाव के थे और उन्होंने सबसे पहले इस देश में कृषि का विकास किया। जिन्होंने सर्वप्रथम समुद्र में यात्राएं आरंभ की और नदियों को बांधने–बांध बनाने का काम शुरू किया। यही नही समाज की मातृ मूलक व्यवस्था के भीप्रवर्तक द्रविण ही रहे और शैव–शाक्तधर्म के साथ उन्होंने भक्तिवाद का विकास भी किया।[9] ये प्रमुखतया शिव पूजक थे, फिर शिव परिवार को अपनाया और फिर विष्णु को अवतारों समेत स्वीकार लिया। मेकल पर्वत और विंध्य पर्वत श्रृंखला से लेकर दक्षिण में श्रीलंका तक शिवपूजन का प्रसार द्रविणो के ही काल में ही हुआ। समूची नर्मदा घाटी में निर्मित शिव मंदिर आज भी उनकी आस्था के प्रतीक रूप में नजर आते हैं। द्रविण प्रकृति पूजक थे, वृक्षों, सूर्य और चंद्र के साथ नदियों में भी उनकी आस्थाथी। इसी आस्था ने नर्मदा को शिव पुत्री के रूप में देवी का दर्जा दिया। मेकल पर्वत और आस–पास के क्षेत्रों में सर्वाधिक रूप से मिलने वाले गोंड़ जाति के लोग स्वयं को रावण का वंशज मानते हैं। गोंड़ जाति के लोग आज भी शिव और नर्मदा के आराधक हैं। इस तरह औश्ट्रिक और नीग्रो के बाद नर्मदा तट में प्रमुख रूप से द्रविण संस्कृति फली फूली। इन्हें नर्मदा ने जीवन दिया और नर्मदा ने ही पाला–पोसा। डॉ. सुनीति कुमार चटर्जी का अनुमान है कि आर्यों ने द्रविणों को ही दास, आग्नेय जाति वालों को कोल–भील और निशाद तथा मंगोल जाति वालों को किरात कहा है।[10]

ऋग्वेद काल/आर्यों का प्रसार

'ऋग्वेद' आर्यों का ही नहीं अपितु संपूर्ण विश्व का प्राचीनतम ग्रंथ है। जर्मन विद्वान जकोबी ने ऋग्वेद का रचना काल 6,500 ईसा पूर्व और कल्प सूत्रों का रचना काल 4,700 ईसा पूर्व माना था जबकि लोकमान्य बालगंगाधर तिलक ने ब्राह्मण ग्रंथों का रचना काल 4,500 ईसा पूर्व बताया था। इसी तरह डॉॅ अविनाश चंद्र दत्त ऋग्वेद को 50 से 75 हजार वर्ष पुराना मानते हैं और पंडित रामगोविंद द्विवेदी का कहना है कि ऋग्वेद में ऐसे कई मंत्र है, जिनसे सिद्ध होता है कि ऋग्वेद का रचनाकाल 18 हजार वर्ष से लेकर 50 हजार वर्ष के बीच का है।[11] आर्यों के जीवन और संस्थाओं के ऐतिहासिक पुनर्निर्माण का आधार यही साहित्य है। इसी तरह वेदों का एक नाम श्रुति भी है, जिससे अनुमान होता है कि पूर्व में वेदों की रचना मौखिक रूप से की गई और लोग मौखिक रूप से वेदों की ऋचाओं को याद भी रखा करते थे। बाद में मंत्रों की संख्या ज्यादा बढ़ने पर उन्हें संहिताओं में विभाजित किया गया। वेद आज जिन संहिताओं में मिलते हैं, उनका संपादन महर्षि व्यास ने किया था जो महाभारत काल तक जीवित रहे। ''ऋग्वेद में कहीं भी ऐसा नहीं लिखा है कि आर्यों ने भारत पर आक्रमण किया था या इसे जीता था। तमिल प्राचीन साहित्यों से यह बात नजर आती है कि आर्य आरंभ में विंध्य के उत्तर तक ही सीमित थे। दक्षिण में वे बसते थे, जिन की भाषा संस्कृत नहीं थी। तमिल साहित्य में संस्कृत भाषियों को उत्तरवाला (बवंडर) कहा गया है। अपेक्षया नवीन संस्कृत साहित्य में दाक्षिणात्य शब्द द्रविण के लिए प्रयोग किया गया है।''[12] वैदिक साहित्य में दक्षिण भारत का उल्लेख नहीं मिलता, किंतु दक्षिण का ज्ञान जरूर आर्यों को भली–भांति रहा। ऋग्वेद में महर्षि अगस्त्य का नाम है और रामायण के अनुसार श्रीराम का महर्षि अगस्त्य से प्रथम साक्षात्कार दंडकारण्य में हुआ, जिनका आश्रम विंध्य और नर्मदा के दक्षिण क्षेत्र में था। इसी तरह श्रीराम व अगस्त्य ऋषि के संवाद से भी इस अनुमान को बल मिलता है कि दक्षिण को बसाने का काम अगस्त्य ऋषि ने ही किया था।

''तमिल परंपरा की कथा है कि शिव और उमा के विवाह के समय दक्षिण के सभी ऋषि मुनि हिमालय पर्वत पहुंच गए थे, जिससे पृथ्वी का संतुलन बिगड़ने लगा। इससे चिंतित देवताओं ने महादेव शिव से प्रार्थना की कि आप किसी ऐसे तेजस्वी ऋषि को दक्षिण की ओर भेजें, जिसके आकर्षण से मनुष्य दक्षिण लौट सके। देवताओं के निवेदन पर शिवजी ने इस काम के लिए अगस्त्य ऋषि को चुना और महर्षि अगस्त्य उत्तर पथ व दक्षिण पथ के प्रथम सेतु बने। जब अगस्त ऋषि दक्षिण की ओर जाने लगे तो उन्होंने सर्वप्रथम गंगा से उसकी एक धारा कावेरी को अपने साथ लिया, फिर महर्षि जमदग्नि के पुत्र धूमाग्नि को, पुलत्स्य ऋषि की कुमारी बहन लोपामुद्रा को और द्वारका जाकर वृष्णिवंश के अठारह राजाओं को अपने साथ लेकर नर्मदा और विंध्य को पार कर दंडकारण्य में वृक्षों को काटते और लोगों को बसाते हुए दक्षिण–पश्चिम की तरफ गए।''[13] इस तरह हम देखते हैं कि वैदिक काल में ही आर्यों और द्रविड़ अर्थात उत्तर और दक्षिण के बीच समन्वय बनाने की प्रक्रिया शुरू हो गई थी, जब आर्य और द्रविड़ का संघर्ष मिट गया, तब द्रविण राजे और पंडित भी आर्यों से एकाकार हो गए। दोनों के मध्य वैवाहिक संबंधों से संस्कृतियों और देवताओं का भी आदान–प्रदान हुआ। कालक्रम में यह सम्मान इतना प्रगाढ़ हो गया कि सारे देश में आर्य–द्रविड़, उनके रस्मो रिवाज, संस्कृति और साहित्य सब कुछ एक सा हो गया और फिर दोनों के सहयोग से हिंदू धर्म या संस्कृति का निर्माण हुआ। ''ऋग्वेद प्रारम्भ में केवल आर्यों का ग्रंथ था, लेकिन उसके बाद के उपनिषदों, पुराणों, स्मृतियों एवं दर्शन में द्रविण संस्कृति का जबरदस्त प्रभाव देखने को मिलता है। विंध्य और नर्मदा के उत्तर को सामान्यतया आर्यों का देश और दक्षिण के क्षेत्र को द्रविण देश कहते हैं।''[14] भारत की भौगोलिक एकता को दर्शाते हुए विष्णु पुराण लिखता है ...

''उत्तरं यत् समुद्रस्य हिमाद्रेश्चैव दक्षिणम्। वर्ष तद्भारतं नाम भारती यत्र संततिः।।''[15]

आज भी स्नान करते समय धार्मिक व्यक्ति एक श्लोक का वाचन करते हैं, जिसमें देश की प्रमुख नदियों का नाम लेते हुए उन्हें प्रणाम किया जाता है, आराधना की जाती है।

''गंगा च यमुने चैव गोदावरी सरस्वती। नर्मदे, सिंधु कावेरी जलेस्मिन् सन्निधम् कुरु।।''[16]

इस तरह जब नर्मदा के उत्तर में आर्य संस्कृति फल–फूल रही थी उस समय दक्षिण में द्रविड़ संस्कृति का प्रसार हो चुका था और दोनों के बीच विंध्य की उपत्यकाओं, पर्वत शिखरों और नर्मदा घाटी के सघन वन में वनवासियों के रूप में औश्ट्रिक, नीग्रो, शबर, किरात, कोल, गोंड़ और भील जैसी पुरातन जातियां अपनी संस्कृति को सहेजे हुए थी। कुछ इतिहासकारों के अनुसार शिव संबंधी कल्पना के विकास में भी इन्हीं औश्ट्रिक और नीग्रो संस्कृतियों की भी कुछ देन है। डॉक्टर भंडारकर का कहना है कि रूद्र–शिव का संबंध आरंभ में जंगली जातियों से भी रहा होगा अथवा यह भी संभव है कि जंगली जातियों के बीच प्रचलित देवताओं के भी गुण बाद में रूद्र–शिव की कल्पना के साथ आ मिले। शिव का भांग–धतूरा खाना, शमशान में रहना, गले में सर्प का होना, बैल की सवारी करना आदि बातें जंगली लोगों से आई होंगी। डॉक्टर सुनीति कुमार चटर्जी का कहना है कि द्रविड़ लोग भारत में रोम सागर से आए थे और संभवतः शिव एवं शक्ति संबंधित दार्शनिक भाव भी वहीं से लाए थे। धर्मानंद कोसंबी ने शैवधर्म के विकास के बारे में कहा है कि वेद के रुद्र और बाद के शिव एक ही हैं।[17] जब उत्तर भारत में शिव और उमा की पूजा का चलन शुरू हुआ, तब दक्षिण में गणेश और कार्तिकेय के साथ शिव परिवार की पूजा का प्रचलन हो चुका था।[18] यही वजह है कि नर्मदा के कण–कण में शंकर की मान्यता को बल मिला और संपूर्ण नर्मदांचल में शिवालयों की स्थापना की गई है। ऐतरेय ब्राह्मण में मध्य प्रदेश के घने जंगलों में अनार्य जातियों के रहने की बात कही गई है। अमरकंटक पर्वत में शिव, विष्णु और शक्ति के आराधक ऋषियों की तपोस्थलियां और प्रमुख तीर्थों में विष्णु या कृष्ण के मंदिरों के साथ मातृ तीर्थों की उपस्थिति स्पष्ट करती हैं कि नर्मदा न केवल संस्कृतियों की जनक और द्रष्टा रही अपितु उत्तर–दक्षिण, आर्य–द्रविण–आग्नेय अथवा शैव, शाक्त और वैष्णव सभी जातियों, संस्कृतियों और सम्प्रदायों को नर्मदा ने एक सुंदर माला के मनकों की भांति सहेजा भी, इसी माला में आगे चलकर बौद्ध और जैन भी मोतियों की भांति शोभा बढ़ाने लगे।

पौराणिक काल/अनुश्रुतिगम्य इतिहास

पुराणों में नर्मदा का इतिहास कई कल्पों प्राचीन बताया गया है। नर्मदा पुराण में मार्कण्डेय ऋषि कहते है कि पूर्व के सात कल्पों में वे स्वयं नर्मदा के द्रष्टा रहे। नयी सृष्टि के सृजन के साथ ही नर्मदा का जन कल्याण के लिए नया अवतरण होता है। वर्तमान वाराहकाल मे सृश्टि सृजन और मनुष्य की उत्पत्ति के सम्बंध में श्रीमद्भागवत[19] में वर्णित है–द्रविण देश के स्वामी राजर्षि सत्यव्रत इस काल के वैवस्वत मनु हुए। मनु ने संतान प्राप्ति हेतु यज्ञ किया, लेकिन इसके विपरीत संकल्प के कारण उन्हें इला नामक पुत्री हुई। गुरु वशिष्ट ने भगवान विष्णु की स्तुति कर इला को सुदुम्मन नामक पुत्र में परिवर्तित कर दिया। इस तरह व अर्धनारीश्वर रूप को प्राप्त हुई इला और बुध से सोमवंश (चन्द्रवंश) और इला, सुदुम्मन से सूर्यवंश की उत्पात्ति हुई। इला और बुध के पुत्र सोमवंशी राजा पुरुरवा के आधीन ऐल साम्राज्य का विस्तार बुंदेलखंड तक हो गया। पुरुरवा ने वैष्णव मनमन्तर में शिव की तपस्या की और पितरों के तर्पण व जन कल्याण के लिए नर्मदा के अवतरण का वरदान प्राप्त किया। पुरुरवा के पुत्र आयु और अमावसु हुए।

आयु की तीसरी पीढ़ी के पुत्र यदु से यादव वंश की स्थापना हुई। यदु के दो पुत्रों क्रोस्ट और सहस्त्रजित थे। क्रोस्ट के वंशज यादव और सहस्त्रजित के वंशज हैहय कहलाये। इक्ष्वाकु के पुत्र दंडक के नाम पर नर्मदा से लगे क्षेत्रों और दक्षिण क्षेत्र के घने जंगली भाग का नाम दंडकारण्य पड़ा। ऐल वंश की राजकुमारी बिन्दुमती के तीनपुत्र पुरुकुत्स, अंबरीश और मुचकुंद तथा कावेरी नामक कन्या हुई। इस युग मे पुरुकुत्स पुनः तपस्या कर नर्मदा अवतरण के माध्यम बने और नर्मदा से विवाह किया। उसने मध्य देश में बसे नाग राजाओं को गन्धर्वों के विरुद्ध सहायता देकर विजई बनाया। नर्मदा के भाई मुचकुंद ने परियात्र और ऋक्ष पर्वत के प्रदेश को जीत कर नर्मदा के किनारे दुर्ग का निर्माण कराया। बाद में हैहय राजा महिष्मन्त ने मुचकुंद को पराजित कर उससे यह दुर्ग छीन लिया और इसी दुर्ग का नाम महिष्मति (महेश्वर) रखा। महिष्मन्त के वंश में कार्त वीर्य हुआ जो मध्य देश और समूचे नर्मदांचल के विशाल साम्राज्य का उत्तराधिकारी था। उसकी चार हजार भुजाएं अपार शक्ति की द्योतक है। कार्यवीर्य ने जमदग्नि से टारकोट, वंशीनाग, अयोध्या के पौरवराज, त्रिशंकु और लंका के राजा रावण को पराजित किया, लेकिन जमदग्नि पुत्र परशुराम के हाथों मारा गया। परशुराम के बाद हैहय पुनः खड़े हो गए और कार्तवीर्य अर्जुन के पुत्र जयध्वज ने अवंती जो मालवा क्षेत्र में था, में अपना राज्य स्थापित किया। इस समय महिष्मति में कलचुरी शासकों का शासन था। इन्हीं कलचुरियों की एक शाखा ने जबलपुर के निकट नर्मदा तट पर त्रिपुरी में एक राज्य बसाया। जय ध्वज के पुत्र तालजंघ के पांच पुत्र हुए जिनके नाम विचित्रहोत्र, शर्यात, भोज, अवंती और कुडिकेरथे। वीतिहोत्र और कुडिकेर के विंध्याचल में बुंदेलखंड में रहे, जबकि अवंती ने मालवा क्षेत्र पर शासन किया। विदर्भ के शासक यादव वंशी कौशिक ने अपने साम्राज्य का विस्तार कर चर्मण्वती, शुक्लमती ने बुंदेलखंड में राज्य स्थापित किया जो चेदिजनपद कहलाया। विदर्भ का एक अन्य शासक भीमरथ हुआ, जिसकी कन्या दमयंती से नलपुर के राजा नल ने विवाह किया। अनुश्रुति के अनुसार नल ने ही नलपुर के नाम से नरवर नगर बसाया था।

देव–दैत्य (इंद्र–वृत्तासुर) संग्राम[20]

''ततः सुराणाम् सुरैः रणः परम दारुणः।
त्रेता मुखे नर्मदायाम् भवत् प्रथम युगे।।''

श्वैवश्वत मन्वंतर जो इस समय चल रहा है उसकी पहली चतुर्युगी का त्रेतायुग अभी आरंभ ही हुआ था। उसी समय नर्मदा तट पर देवताओं का दैत्यों के साथ भयंकर युद्ध हुआ। श्रीमद् भागवत महापुराण में नर्मदा तट पर हुए देव–दैत्य संग्राम का विवरण विस्तृत रूप से दिया गया है। इस युद्ध में देवराज इंद्र के नेतृत्व में रूद्र, वसु, आदित्य, दोनों अश्विनी कुमार, पितृगण, अग्नि, मरुदगण, ऋभुगण, साध्य गण और विश्वदेव अन्य देवताओं के साथ शामिल हुए। असुर सेना में असुर राज वृत्रासुर के नेतृत्व में नमुचि, शंबर, अनर्वा, द्विमूर्धा, ऋषभ, अंबर, हयग्रीव, शंकुशिरा, विप्रचित्ति, अयोमुख, पुलोमा, वृषपर्वा, हेति, प्रहेति उत्कल, सुमाली एवं माली के साथ हजारों दैत्यों–दानवों एवं यक्षों ने भाग लिया। इस युद्ध में गदा, परिध, वाण, प्रास, मुद्गर, तोमर, शूल, फरसे एवं तलवारों के साथ शतघ्नी (तोप) का भी प्रयोग किया गया। नर्मदा तट पर हुए देवों एवं दानवों के बीच इस भीषण संग्राम में देवताओं की वीरता से भयभीत असुर सेना मैदान छोड़कर भाग निकली। क्रोधित वृत्तासुर देवताओं से अकेले ही भिड़ गया। प्रारंभ में देवराज इंद्र ब्रह्महत्या के भय से वृत्रासुर को मारना नहीं चाहते

थे, लेकिन बाद में ऋषियों और देवताओं की प्रेरणा से इंद्र ने वृत्रासुर का वध कर दिया।

गंधर्व–पुरुकुत्स युद्ध[21]

नर्मदा को जहां नागों की बहन माना जाता है, वही चतुर्थ अवतरण के दौरान नर्मदा ने सोमवंशी राजा पुरुकुत्स को पति रूप में स्वीकारा था और उन्हें त्रसदस्यु नामक पुत्र की प्राप्ति भी हुई थी। पुरुकुत्स पूर्व में सागर (समुद्र) थे जो ब्रह्माजी के शाप के कारण पुरुकुत्स रूप में जन्मे थे। विष्णु पुराण में वर्णित कथा के अनुसार पूर्व काल में रसातल में मौनेय नामक छै करोड़ गंधर्व रहते थे। इन गंधर्वों ने समस्त नाग लोको के रत्न और अधिकार छीन लिए थे। गंधर्वों से अपमानित नागेश्वरों ने भगवान विष्णु की आराधना की और उनसे सहयोग मांगा। भगवान विष्णु ने नागों को वरदान देते हुये कहा कि मांधाता पुत्र पुरुकुत्स में प्रविष्ट होकर मैं शीघ्र ही आततायी गंधर्वों का विनाश करूंगा। नागाधिपति वासुकी ने अपने लोक में लौटने के बाद अपनी बहन एवं पुरुकुत्स की पत्नी नर्मदा को संपूर्ण जानकारी दी। भाइयों की मदद करने नर्मदा ने अपने पति को नागों के सहयोग हेतु तैयार किया और उसे अपने साथ लेकर रसातल पहुंची। रसातल में भगवान विष्णु के तेज से बलशाली हो पुरुकुत्स ने सभी गन्धर्वों को मारकर नागों की मदद की।

रामायण काल की प्रमुख घटनाये/युद्ध

रामायण काल तक जहाँ उत्तर से दक्षिण आवागमन शुरू हो गया था, वहीं आर्यो और द्रविणों का संघर्ष भी जोर पकड़ने लगा था। उस समय समूचा नर्मदांचल दंडकारण्य के नाम से जाना जाता था। नर्मदा और विंध्य के उत्तर में आर्यों की बस्तियां और दक्षिण में सघन वन, वनों में निवास करने वाले वनवासी और फिर द्रविण राज्य। नर्मदा से लगे मध्य देश मे दंडकारण्य महावन और महाकांतर के घने जंगल थे। उस काल मे उत्तर से दक्षिण जाने का मार्ग नर्मदा के उत्तर तट में स्थित महिष्मती राज्य से होकर जाता था जो हैहय वंश के महान सम्राट सहस्त्रार्जुन की राजधानी थी। बाद में यदुवंशी राजा मधु इस क्षेत्र का राजा हुआ। आर्यों ने आधिपत्य प्राप्त करने के पूर्व ही इस भूमि को इक्ष्वाकु वंशियों की मान लिया था। जब कौशल के राजा राम यहां आए तो उन्हें कई स्थानों पर ऋषिओं–मुनियो की हड्डियो के ढेर दिखाए गए। श्रीराम ने दंडकारण्य को अपने राज्य का ही भाग मानते हुए आतताइयों को मारना शुरू कर दिया। बलि वध का निश्चय करते हुए उन्होंने स्पष्ट कहा था ष्यह वन, कानन, शालिनी, सशैल भूमि इक्ष्वाकु वंशियों के अधिकार में है। भरत उस वंश के राजा हैं और हम उनकी आज्ञा अनुसार पापियों को दंड देने के लिए नियुक्त हैं। जिन्हें दंड देना है उनके संग क्षत्रियों के समान सम्मुख होकर युद्ध करने की कोई आवश्यकता नहीं है।ष राम ने अपने वनवास का अधिकांश समय इसी दंडकारण्य में व्यतीत किया और नर्मदा के दक्षिण स्थित अनेकों स्थानों का भ्रमण किया।

''रामकथा भारत में संस्कृतियों के विराट समन्वय का प्रतीक भी है। इस कथा से भारत की भौगोलिक एकता भी परिलक्षित होती है। अयोध्या, मेकल, किष्किन्धा और लंका, चारों के एक सूत्र में बंध जाने के कारण समूचा भारत एक दिखता है। श्रीराम आर्य प्रतिनिधि थे, हनुमान किष्किंधा के वनवासी वानर, जामवन्त ऋक्ष पर्वत (मेकल) के राजा और रावण दक्षिण स्थित लंका का द्रविण राजा। एक ही कथा में सभी जातियों का प्रतिनिधित्व रहा। यही नहीं भारत की लगभग सभी प्रमुख भाषाओं में रामायण की रचना की गई। रघुवंशम, भट्टिकाव्य, महावीर चरित, उत्तर रामायण, प्रतिमा नाटक, जानकी हरण, कुंदमाला, अनर्घराघव, बाल रामायण, हनुमंत नाटक, अध्यात्म रामायण, अद्भुत रामायण एवं आनंद रामायण जैसे ग्रंथ पूर्णतया बाल्मीकि रामायण से प्रभावित रहे। इसी तरह 12वीं सदी में कंबन कृत तमिल रामायण, 14वीं सदी में मलयालम रामायण, 16वीं सदी में कन्नड़ी तोरावे रामायण, 15वीं सदी में बंगला कृतिवासी रामायण, 16वीं सदी में रामचरित मानस और मराठी भावार्थ रामायण जैसे अनेक ग्रंथों की रचना की गई।''[22] रामकथा ने शैव और वैष्णव मतों का भी विभेद दूर किया। रावण से युद्ध के पूर्व श्रीराम का रामेश्वरम में शिवलिंग स्थापित कर पूजन करना और हनुमान का रूद्र अवतार माना जाना बताता है कि रामकथा में शैव और वैष्णव दोनों के द्वारा एक दूसरे को सम्मान दिया गया है। रामायण में निषाद एवं शबर जातियों का उल्लेख मिलता है। कुछ विद्वान मेकल पर्वत पर रहने वाली बैगा जनजाति को ही निषाद मानते हैं, उधर बैगा जनजाति के लोग स्वयं को रावण के वैद्य सुषेण का वंशज मानते हैं। श्रीराम के बाद उनका पुत्र दक्षिण कोशल का राजा हुआ तो शत्रुघ्न के पुत्र शभुघाती ने विदिशा पर शासन किया और कुशावती को राजधानी बनाया। इधर नर्मदा तट से विन्ध्यांचल और सतपुड़ा के जंगलों में निषाद जाति का राज्य था। पुराणों एवं प्राचीन ग्रन्थों में इस काल मे नर्मदा तट पर घटित घटनाओ में तीन बड़े युद्धों का वर्णन मिलता है।

महर्षि जमदग्नि–कार्तिवीर अर्जुन युद्ध[23]

महर्षि जमदग्नि का आश्रम नर्मदा तट पर ही था, जहां वे अध्ययन, अध्यापन और अन्वेषण करते थे। हैहयवंशी महान सम्राट से उनका युद्ध इसी आश्रम में हुआ था। ब्रह्मवैवर्त पुराण में वर्णित कथा के अनुसार महिष्मति सम्राट कार्तवीर अर्जुन एक समय शिकार खेलने वन गए हुए थे। सायंकाल उन्होंने महर्षि जमदग्नि के आश्रम के समीप अपनी सेना सहित पड़ाव डाला। प्रातः स्नान उपरांत वे पूजन कर रहे थे, उसी समय महर्षि जमदग्नि वहां पहुंचे और कार्तवीर से कुशल क्षेम पूछा। कार्तिवीर ने उन्हें बताया कि भोजन व्यवस्था न होने से उसने बीती रात से कुछ नहीं खाया है। महर्षि ने राजा को भोजन के लिए आमंत्रित किया और आश्रम लौट आये। जमदग्नि के पास कामधेनु गाय थी जो किसी भी इच्छा को तत्काल पूरा कर देती थी। महर्षि ने आश्रम आकर कामधेनु को सारा वृत्तान्त बताया। कामधेनु ने राजा और उनकी समूची सेना के लिए भोजन, सोने–चांदी के बर्तन और कपड़े की व्यवस्था कर दी। जानकारी मिलने पर राजा ने जमदग्नि से कामधेनु की मांग की। ऋशि द्वारा मना किए जाने पर राजा के सैनिकों ने जब बलपूर्वक गाय को ले जाना चाहा तो दुखी हो महर्षि ने कामधेनु से मदद मांगी। कामधेनु ने राजा की सेना से युद्ध करने आयुध समेत विशाल सेना को प्रकट कर दिया। दोनों सेनाओं में भीषण युद्ध हुआ और कार्तिवीर मूर्छित हो गया। ऋषि ने कमंडल से जल छिड़क राजा की मूर्छा दूर की और पुनः समझाते हुए वापस लौटने की बात कही। जिद पर अड़े राजा ने ऋषि को पुनः ललकारा और युद्ध शुरू हो गया। दोनों पक्षों की ओर से दिव्यास्त्रों के प्रयोग होने से हालात बिगड़ने लगे। यह देख भगवान ब्रह्म प्रकट हुए और उन्होंने दोनों को समझाकर युद्ध शांत कर दिया और राजा वापस महिष्मती लौट गया। महल लौटकर आए। कार्तिवीर ने पुनः सेना एकत्र की और जमदग्नि आश्रम को एक बार फिर घेर लिया और दोनों के बीच पुनः भीषण युद्ध शुरू हो गया। कई दिनों तक चलने वाली इस लड़ाई के बाद कार्तिवीर ने दत्तात्रेय मुनि से प्राप्त एक प्रमुख शक्ति से महर्षि जमदग्नि पर वार किया, जिसने मुनि के हृदय को बेंध किया और महर्षि जमदग्नि की मौत हो गई।

महिष्मती सम्राट सहस्त्रार्जुन–लंकापति रावण संग्राम [24]

वाल्मीकि रामायण में वर्णित कथा के अनुसार श्रीराम गुरु वशिष्ठ से पूछते हैं कि रावण जब समूचे देश को आतंकित करता था, क्या तब किसी भी राजा ने उसका विरोध नहीं किया। इस पर गुरु वशिष्ठ बताते हैं कि एक बार लंकापति रावण नर्मदा किनारे स्थित महिष्मति नगर पहुंचा। महिष्मती सम्राट के राजधानी में न मिलने पर वह विंध्य पर्वत पहुंचा और नर्मदा नदी में स्नान कर

नर्मदा तट पर शिव की आराधना शुरू कर दी। उसी दौरान नर्मदा की धारा उल्टी बहने लगी और पानी तट के ऊपर पहुंच गया, जिससे रावण की पूजन सामग्री बह गई। कारण जानने के लिए गए उसके मंत्रियों ने बताया कि माहिष्मति सम्राट कार्तवीर्यार्जुन नर्मदा स्नान कर रहे हैं और उन्हीं ने अपनी हजार भुजाओं से नर्मदा की जलधारा रोक रखी है। इस पर क्रोधित हो रावण वहां पहुंचा और दोनों सेनाओं में भयंकर युद्ध शुरू हो गया। लंबी लड़ाई के बाद भी परिणाम न निकलने से आक्रोशित सहस्रार्जुन ने रावण को अपनी बाहों में पकड़कर बंदी बना लिया और अपनी राजधानी महिष्मती ले आया। जब इस बात की जानकारी रावण के स्वर्गवासी पितामह महर्षि पुलस्त्य को मिली तो वे स्वर्ग से आए और उनके कहने पर अर्जुन ने रावण से मित्रता करते हुए उसे मुक्त कर दिया।

परशुराम द्वारा सहस्त्रार्जुन का वध[25]

कार्तवीर्यार्जुन द्वारा महर्षि जमदग्नि की हत्या से व्यथित महर्षि पत्नी दुखी होते हुए अपने पुत्र राम को पुकारने लगी। राम उस समय पुष्कर तीर्थ में थे, मां की पुकार पर वे मानस गति से चलकर पिता के आश्रम पहुंचे। घटनाक्रम की जानकारी मिलने पर उन्होंने कार्तवीर्यार्जुन समेत उसके बंधु–बांधवों एवं सभी क्षत्रियों का वध करने और पृथ्वी को 21 बार क्षत्रिय विहीन करने का प्रण लिया। पिता की अंत्येष्टि कर भगवान ब्रह्मा, महादेव और भगवती की तप और स्तुति की। भगवान शंकर ने प्रसन्न हो उन्हें अनेक दिव्यास्त्र दिए और त्रैलोक विजय कवच प्रदान करते हुए विजय का आशीर्वाद दिया। तत्पश्चात् परशुराम अपने शिष्यों, पिता के शिष्यों एवं बंधु–बंधुओं के साथ कार्तवीर्य से युद्ध करने रवाना हुए। नर्मदा तट पर स्थित कार्तवीर्य के आश्रम के समीप उन्होंने विश्राम किया और प्रातः कार्तवीर्य को युद्ध का संदेश भेजा। इस ऐतिहासिक युद्ध में लाखों योद्धाओं ने भाग लिया। उत्तर और दक्षिण के लगभग सभी प्रमुख राजा और राज्य इस युद्ध मे शामिल रहे। कार्तविर्यार्जुन के पक्ष में मत्स्य राज, ब्रह्दवाल, सोमदत्त, विदर्भ, मिथिलेश्वर, निषादराज, मगधादिपति, कान्यकुब्ज, सौराष्ट्र, वारेंद्र, सौम्य बंगीय, महाराष्ट्र गुर्जर जातियां और कलिंग देशों के राजा अपनी सेनाओं के साथ रहे। कई दिनों तक चले इस भीषण संग्राम में अनेकों राजाओं और लाखों सैनिकों की मौत हुई। अंत में परशुराम ने ब्रह्मास्त्र का प्रयोग कर कार्तवीर्य की समूची सेना का नाश कर दिया और पाशुपतास्त्र का प्रयोग कर कार्तवीर्य अर्जुन की जीवन लीला समाप्त कर दी। परशुराम ने इक्कीस बार दुराचारी क्षत्रिय राजाओ का वध किया और रेवासागर संगम में रक्त से पितरो का तर्पण किया। कार्तवीर्य के वंशज बच गए, जिन्होंने बाद में अपना आधिपत्य इतना बढ़ाया की वे सम्पूर्ण भारत के सम्राट हो गए।

निष्कर्ष

नर्मदा घाटी क्षेत्र या नर्मदा अंचल में मानव जीवन के अवशेष पूर्ण पाषाण काल से मिलने लगते हैं। इस काल में औजार अथवा हथियार बिना बेंट के होते थे। इनमें हस्तकुठार, मुष्ठीकुठार, क्रोड एवं खुरचती जैसे औजार प्रमुख हैं। भू–वैज्ञानिकों एवं पुरातत्ववेत्ताओं के द्वारा किये गए अन्वेषणों के बाद नर्मदा और उसकी सहायक नदियों की घाटियों से कई जिलों में इस तरह के औजार प्राप्त हुए हैं। अभी तक जो पाषाणकालीन स्थल मिले हैं, उनमें नर्मदा से जुड़े शहडोल, मण्डला, धार, जबलपुर, नरसिंहपुर, होशंगाबाद के साथ पूर्वी तथा पश्चिमी निमाड़ शामिल हैं। डिंडौरी जिले में प्रागैतिहासिक काल के अनेकों पुरावशेष देवनाला, घोडामाला, जानामाड़ा, अमोलखोह, कुदरु, घुघरा, गढ़, घोघर एवं खीरी से प्राप्त हुए हैं। अमरकंटक से 95 किमी की दूरी पर स्थित घोडामादा की गुफा से प्राप्त उपकरण उच्च पुरा पाषाण काल के हैं, यह स्थान नर्मदा नदी से महज 5 किमी की दूरी पर है। यहां वर्ष 1999 में प्रो. विवेकदत्त झा ने जब गुफा के अंदर उत्खनन कराया तो उच्च पुरापाषाण काल के कई उपकरण मिले, इन अन्वेषणों के बाद वैज्ञानिकों का अनुमान है कि उस काल में मनुष्य नदियों के किनारे, घाटियों में, पर्वतों की कन्दराओं और गुफाओं के साथ नदी तट पर निवास करते थे। इसी तरह मध्य पाषाण युग के प्रथम चरण में औजार बनाने की कला पूर्व पाषाण युग की ही भाति थी, मगर इस काल मे उनके आकार अपेक्षया छोटे हो गए थे। इस तरह के औजार नर्मदा अंचल के शहडोल, मण्डला, जबलपुर, नरसिंहपुर, होशंगाबाद, के साथ ही पूर्वी तथा पश्चिमी निमाड़ के जिलों में प्राप्त हुए हैं। ये भी नर्मदा और उसकी सहायक नदियों के समीपवर्ती क्षेत्रो से मिले हैं। उत्तर पाषाण युग के मानवों का विकास हो जाने के कारण उनके द्वारा प्रयोग में लाये जाने वाले औजार और भी छोटे व कारगर थे। इनमे खुरचनी, बेंधनी, समलम्ब, शल्क, कोड, फलक, तिकोने तथा अर्धचंद्राकार औजार प्रमुख है। इन औजारों कोजास्पर, चौलसीडोनी, क्वार्ट्ज़ आदि धातुओं से बनाया गया था। नर्मदा घाटी क्षेत्र में अन्वेषण के दौरान शहडोल, मण्डला, जबलपुर, होशंगाबाद, धार एवं पूर्वी निमाड़ में पाए गए हैं। इस युग के मानव मछलियों, तथा पशुओं का शिकार कर भोजन करते थे। ये मिट्टी के बर्तन, आभूषणों में मनके तथा सीप उपयोग भी करते थे। रायसेन जिले में स्थित भीम बैठका की गुफाओं में प्रागैतिहासिक काल के 740 शैलाश्रय का 10 हजार वर्ष पुराना समूह है। ये भारत का सबसे प्राचीन और सबसे ज्यादा शैलाश्रयों वाला स्थल है। इसी की खोज पर डॉ0 वाकणकर को भारत सरकार ने पद्म श्री सम्मान से सम्मानित किया गया था। नरसिंहपुर, होशंगाबाद और आदमगढ़ से प्रागैतिहासिक शैलचित्र और अनेकों शैलाश्रय प्राप्त हुए हैं। नव पाषाण युग के मानव के औजार और भी ज्यादा विकसित हो चुके थे। इस दौरान कुल्हाड़ी का प्रयोग शुरू हो गया था। इसके साथ ही सेल्ट, बसूला, रचक, ओपकरने वाले तथा घन प्रमुख औजार थे। नर्मदा से जुड़े जबलपुर एवं होशंगाबाद में इन औजारों का मिलना इस क्षेत्र में मानव जीवन की पुष्टि करता है। इस काल का मानव जहां अग्नि का प्रयोग करने लगा था, वहीं खेती, पशुपालन के साथ ही वस्त्र निर्माण, अस्त्र निर्माण और कृषि जैसे उद्यम शुरू कर चुका था। मनुष्य ने जब ताँबे का प्रयोग शुरू कर दिया, उस कालकोताम्र पाषाण युग कहा जाता है। इंदौर, धार, जबलपुर, पश्चिमी निमाड़ के साथ मालवा के कुछ क्षेत्रों में चित्रित भूरे ताँबे के पात्र पाए गए हैं। इसी तरह कुछ क्षेत्रों में लोहे के उपकरणों का भी अन्वेषण किया गया है। हालांकि ताँबे के पात्र दूसरी नदी घाटियों या उनके किनारों पर मिले हैं, लेकिन इन जिलों से नर्मदा भी प्रवाहरत है। इनके साथ ही अमरकंटक में जोहिला नदी के समीप जहाँ राजेन्द्र ग्राम में नवपाषाण कालीन उपकरण मिले हैं, वहीं राजेन्द्रग्राम के समीप बहगढ़ नाला से मध्य पाषाणकाल के उपकरण मिले हैं। अमरकंटक में ही शम्भूधारा के समीप मिले मध्य पाषाणकाल के उद्योग और सूक्ष्म उपकरण बनाने में प्रयोग होने वाला क्वार्टजाइट पत्थर और माई के मंडप के समीप मिले, नवपाषाण कालीन राख के ढेर ने नर्मदा तट पर मानव सभ्यता विकसित होने के प्रमाण दिए हैं।

सन्दर्भ

1. नर्मदा पुराण, पंकज प्रकाशन मथुरा, पृष्ठ–20
2. संस्कृति के चार अध्याय–रामधारी सिंह दिनकर, पृष्ठ–25
3. श्रीमद् भागवत महापुराण,
4. प्रारम्भिक भारत का परिचय, आर.एस. शर्मा, पृष्ठ –56
5. संस्कृति के चार अध्याय–रामधारी सिंह दिनकर, पृष्ठ –27
6. हर्श चरितं, चौखम्बा विद्या भवन, पं. जगन्नाथ पाठक, पृष्ठ –413
7. हर्ष चरितं, चौखम्बा विद्या भवन, पं. जगन्नाथ पाठक, पृष्ठ –430

8. कादम्बरी, चौखम्बा संस्कृत संस्थान, कृश्णमोहन शास्त्री पृष्ठ –93
9. संस्कृति के चार अध्याय–रामधारी सिंह दिनकर, पृष्ठ –32
10. संस्कृति के चार अध्याय–रामधारी सिंह दिनकर, पृष्ठ –32
11. संस्कृति के चार अध्याय–रामधारी सिंह दिनकर, पृष्ठ –42
12. संस्कृति के चार अध्याय–रामधारी सिंह दिनकर, पृष्ठ –49–50
13. संस्कृति के चार अध्याय–रामधारी सिंह दिनकर, पृष्ठ –50–51
14. संस्कृति के चार अध्याय–रामधारी सिंह दिनकर, पृष्ठ–60
15. विष्णु पुराण अध्याय–3, पृष्ठ –77
16. अहणिका सूत्रावली पृष्ठ –106
17. संस्कृति के चार अध्याय–रामधारी सिंह दिनकर, पृष्ठ –69
18. संस्कृति के चार अध्याय–रामधारी सिंह दिनकर, पृष्ठ –70
19. श्रीमद् भागवत महापुराण द्वितीयखण्ड, (गीताप्रेस) पृष्ठ –20
20. श्रीमद् भागवत महापुराण पृष्ठ –755
21. विष्णु पुराण (गीताप्रेस) पृष्ठ –116
22. संस्कृति के चार अध्याय–रामधारी सिंह दिनकर, पृष्ठ –78
23. ब्रह्मवैवर्त पुराण (गीताप्रेस) पृष्ठ –361–366
24. बाल्मीक रामायण (रामनारायण लाल इला., द्वारिका प्रसाद शर्मा) पृष्ठ –379–389
25. ब्रह्मवैवर्त पुराण– पृष्ठ –385